लोगबाग

इब्बार रब्बी

क्रम

दूध पीता हुआ बच्चा

खून के खेत में
क्या कर रहा है ?
करोड़ों वर्ष पुराने कारखाने में
मुँह छिपाए
क्या कर रहा है ?
माँ की गोदी में पाँव पटकता
क्या कर रहा है वहाँ
वात्सल्य की
भँवर में तैरता

भूख के विरुद्ध
गुप्त कार्रवायी कर रहा है
बच्चा।

जूते

असंख्य नँगे पाँवों को
कुछ जूते कुचल रहे हैं।

(2-2-1980)

घोंसला

जिस कागज पर मैंने लिखी कविता
उससे चिड़िया घोंसला बना रही है।
कविता की कतरनों पर बैठी
वह अंडे से रही है
कविता बन रही है भाषा
मेरे और उसके बीच।

सुनसान में गर्मी दे रहे हैं शब्द
मुझसे जातकों तक लहरा रहे हैं
पानी की तरह मेरे शब्द
कविता घोंसला बना रही है
वृक्ष बन रही है
मुझसे निकलकर
प्रकृति से जुड़ रही है

कहाँ कहाँ भटका रही है
गर्म पंखों,
सफेद भूरे
गोल कवच की दुनिया में
आकार ले रहा हूँ मैं।

मैं 10-15 वर्ष और जीऊँगा
लेकिन चिड़िया के बच्चे
उड़ते रहेंगे
सारे शहर पर
उन बच्चों के बच्चे
उनके भी बच्चे
छा जायेंगे धरती पर

भरोसा दे रहे हैं अक्षर
शरण हो रहे हैं शब्द
मैं बनजारों की तरह
पड़ाव बदल रहा हूँ
मात्र विचार नहीं,
पूरा घर है कविता।

(17-3-1980)

वर्षा में भीगकर

वर्षा में भीगकर
सहज सरल हो गया,
गल गयीं सारी किताबें
मैं मनुष्य हो गया।

खाली-खाली था
जीवन ही जीवन हो गया,
मैं भारी-भारी
हल्का-हल्का हो गया।

बरस रही हैं बूंदें
इनमें होकर
ऊपर को उठा
लपक कर तना
पानी का पेड़

आसमान हो गया
वर्षा में भीगकर
मैं महान हो गया।

(1-8-80)

डर

(रामशरण जोशी के लिए)

अब डरने से क्या होगा !
होमवर्क किया नहीं
हाय अब क्या होगा !

सुलेख लिखा नहीं
पाठ याद किया नहीं
पहाड़े आते नहीं
गणित समझा नहीं

स्कूल नहीं जाने से क्या होगा !
श्रुतलेख लिखा नहीं
बस्ता लटका लेने
छिपा देने से क्या होगा !
किताब फाड़ लेने
जोड़ लेने से क्या होगा !

मुझसे घर का काम हुआ नहीं
बाहर का खेल सरा नहीं

बच्चों से छेड़छाड़
बीवी से अकड़ गया

अखबार लेकर लेटा रहा
उपन्यास पलटता रहा

कपड़ों की तह कर दी
नाखून काट लिये
जूते चमका लिये
अचार की शीशी साफ की
चाय पीने लगा

पड़ोसी का रेडियो सुना किया
हवा को गाली दी
खिड़की खोली
दरवाजा उड़का दिया
मेज झाड़ी
किताबें सम्हाल दीं

मैंने जिंदगी भर कुछ नहीं किया
मैं चैन से मर नहीं सका।

(19-2-81)

आइये

आइये शोभा बढ़ाइये
हमारी आँखों में सज जाइये ।
आप शरमाती नहीं हैं
यह भला है ।
पिछड़े हुए हैं हम
और बढ़ आइये ।
बचिये इस जानवर से बचिये
इधर आ जाइये ।

आपका आदर भाव नहीं चाहिए
बन्द हैं हम
आप थोड़ा और थोड़ा और
खुल जाइये ।
खिलिये खिलखिलाइये
लोगों के दिलों पर
बिजली जलाइये
देखिये हमसे बढ़ा नहीं जायेगा
आप ही सम्हालिये

आपलहराइये
हमारे तन मन पर
बदली सी छा जाइये
आइये इधर आइये

(19-2-81)

दस

बस 10 बरस बचे हैं,
जो कुछ करना है कर लीजिए
मकान बनवा लीजिए
किताब छपा लीजिए
यश कमा लीजिए
देश को सम्हालिए
राष्ट्र को हिलाइए
समाज को बदलिए
10 बरस से पहले।

बस 10 बरस बचे हैं
जल्दी कर लीजिए
जो कुछ करना है
निबट लीजिए

अब छोड़िए यह दुनिया
कब तक लदेंगे आप
दृश्य बासी हुआ
फीकी बरसातें।
बसंत सूखा सूखा

उतरिए इस गधे से
किसी और को चढ़ने दीजिए
आप दौड़े भी नहीं
रुके भी नहीं
आपने कमाल किया
जीए भी नहीं मरे भी नहीं

अब बस कीजिए
इस धरती पर रहम कीजिए
कीड़े-मकोड़े कुछ तो कम कीजिए
थोड़ी सी थोड़ी सी
बस तिल भर गंदगी दूर कीजि।

आपने पिया भी नहीं
पीने भी नहीं दिया
हटिए
लोगों को नहाने दीजिए।

(19-2-81)

शमशेर

मैं नंगे पाँव धूप में चल रहा था
काँटों भरी डगर पर
एक विशाल बट वृक्ष के नीचे
बैठ गया
बड़ी-बड़ी डालें
झूमती बयार
पानी सी छाँह
मैं छाया में तैरने लगा
पत्तों में सो गया
मैं प्यासा था
सूखा था गला
चाँद के कटोरे में दूध दे गया
मैं हवा की तरह जीने लगा
कटोरा भी पी गया
मैं जगमगाने लगा

भटक रहा था वहाँ
खोह में गुफा में
चमगादड़
मकड़ी के जालों में उलझता

लड़खड़ाता
टोह रहा था
महराब और तहखाने
कि सूरज मुट्ठी में आ गया
रास्ता देखा
समय समझा
धूल झाड़कर बाहर आ गया
मैंने साँस ली
सूरज को जेब में रख
थपथपाया
कंघी निकाल
बाल सम्हालने लगा
नदी से ताल मिलाकर
आगे जाने लगा

बरगद को हँसते देखा
हिमगिरि को गलते देखा
बछड़े को गाते देखा
गुलमोहर को झरते देखा

(19-2-81)

भागो

दुनिया के बच्चो
बचो और भागो
वे पीछे पड़े हैं तुम्हारी
खाल खींचने को
हड्डियाँ नोचने को

बड़े तुम्हे घेर रहे हैं
हीरे की तरह जड़ रहे हैं
ठोक पीट कर कविता में

बच्चो, पेड़, चिड़ियो
रोटी, और पहाड़ो
भागो
क्रांति तुम छिपो
हिन्दी के कवि आ रहे हैं
कागज और कलम की सेना लिए
भागो जहाँ हो सके छिपो ।

(21-4

कवि की पत्नी

बच्चों के लिए जेलर
पति के लिए होटल है,
कवि की पत्नी।
मूँग की दाल पकाती है
टमाटर में नहाती है।
महँगाई की तरह
तुनक मिजाज।
कविता नहीं पढ़ती वह।

(21-4-81)

फोटो

(विष्णु नागर के लिए)

झोपड़ पट्टी का दृश्य है
30 मरे जहरीली शराब से।
रो रही हैं फटेहाल औरतें
आँसू ही आँसू
गीला है अखबार।
किलक रहे हैं
नंग धड़ंग बच्चे
फोटो खिंचा है
पहली बार।

दफ्तर में खिलौना

सड़क, स्टेशन पार कर
लेट हुई ट्रेन का इंतजार कर
गाड़ी में धक्के खाता
ऊँघता और गालियाँ देता
दौड़ता, लिफ्ट फलाँगता
दफ्तर पहुंच गया।

बैग खोला तो
स्मरण पत्र, माँगपत्र, शिकायतें
फाइलों और टिफन के बीच
निकल पड़ा प्लास्टिक का विगुल
जो सीटी की तरह बजता है।

सारा दफ्तर चारों ओर जुट गया
विगुल को डायनोसार के
जीवाश्म की तरह घूर रहा है।

सिट्टी पिट्टी गुम है
यह क्या हो गया
मेरी बच्ची ने बैग में
खिलौना क्यों रख दिया
धूल की परत में हंसी क्यों रख दी
सारे ब्रह्मांड को परेशान कर दिया

हाय मेरी बेटी क्या किया !
अनुशासन भंग कर दिया

सावधान !
यह आतंकवाद है ।

(13-6-81)

सर्कस

वह कलाबाजी दिखा रही है
झूले में लटक गई
खड़ी हुई
पैरों के बल गुड़ीमुड़ी और
हवा में उछल गई
हाथ पैर गोल गोल
सब गायब
सिर्फ पेट दिखता है
झूले पर खड़ी हुई
तो पेट निकल आया

सुंदर नहीं है
नंगी हैं टाँगे और बाँहें
गुड़मुड़ी कच्छे और गुलाबी चोली में
भली नहीं दिखती वह
चेहरा सपाट
जैसे खुरदुरा तख्ता

तख्ते के सहारे खड़ी है
आँख बाँध कर जोकर

मारता है छुरे
एक भी नहीं लगा उसे
हाथ-पैर कुछ नजर नहीं आता
पसलियाँ गिन लो
पर पेट उभर आता है
पूरा तख्ता ही पेट है।

उसकी बच्ची
एक पहिये की साइकिल चलाती है
नहीं दिखते हाथ पाँव
लौंदा जमा है साइकिल पर
पेट धरा है झूले पर
पेट जड़ा है तख्ते पर

(6-10-81)

पंछीनामा
(भरतपुर)

पंछीनामा-1
तेरा पेड़

ये तेरा पेड़, ये मेरा पेड़
ये तेरी डाल, ये मेरी डाल
मेरे पेड़ पर मत आना
मेरी डाल पर मत बैठना
मुकदमा करूँगा।
सभ्य हैं,
सिर्फ चिड़िया नहीं हैं हम।

अबे ! क्यों आदमी की
नकल करता है।

(भरतपुर, 17-10-81)

पंछीनामा-2

खाली जंगल

खाली पड़ा है जंगल
शरद का इंतजार है
पक्षी आयेंगे
उनका इंतजार है
डाल खाली हैं
खड़े हैं वृक्ष
खाली है सरोवर
पक्षियों का इन्तजार है।

(भरतपुर 17-10-81)

पंछीनामा-3
पंछी का नाम

इस पंछी का नाम क्या है
कोई भी तो नहीं
नाम तक नहीं रहा
कुछ ग्रीक में बता दें
हिन्दी में कुछ नहीं कहते
ब्रज में भी कुछ नहीं
दो सौ साल से किसी ने पुकारा नहीं
आदमी हमें जानता नहीं
हमारा कोई नाम नहीं रहा

अब लैटिन में मिलेगा
किताबों में दिखेगा
हमें कोई नहीं पुकारता

गिनती के 100 चिड़ीमार
यूँ ही कुछ कह लेते हैं।

(भरतपुर 18-10-81)

पंछीनामा-4
घना पक्षी विहार

झील के बीच पेड़ पर बैठे हैं
कुछ नहीं कर रहे
सुस्ता रहे हैं।

न बैंक में लाकर
न चोरी की चिंता
न घर की रखवाली
न काम पर जाना
न मकान बनवाना
न बच्चे को पढ़ाना
न प्यारी की चिंता,
न बेटी की शादी,
न माँ का इलाज,
न अस्पताल के चक्कर
न मकान का किराया
न राशन की दूकान
न गैस का सिलेंडर
न कोयले की कमी
न चीनी का अकाल।

न हड़ताल तोड़नी है।
न कविता लिखनी है ।

जब मन हुआ
साइबेरिया चल दिये ;
इधर आ गये ।
जितनी देर, जब तक चाहा
बबूल पर टंगे रहे
खड़यार में उलझे
करील में उतर गये ।
जब मन किया झील में तैरे
मछली खायी,
कीड़ा मारा,
घास कुतर गये ।
भूख से ज्यादा खा लिया
अफारा लिया
धूप सेक ली ।

झील के पंछियो
तुम हमारे आदर्श नहीं हो ।

(भरतपुर 22-10-81)

रचना

मैंने यह नहीं किया
मैंने वह नहीं किया
इस आत्मालाप के सिवा
एक रिरियाहट और
खीज के सिवाय
तुमने और क्या किया

यह काव्य नहीं हुआ
आपने कुछ नहीं किया
यह रचना कार्य
कैसे हुआ।

निषेध
सकार कैसे हो गया
दुनिया को देखा नहीं
पानी में गया नहीं
हवा में उड़ा नहीं
राजनीति की नहीं
कला में नहाया नहीं
संगीत में घिरा नहीं

जिसने कुछ नहीं किया
लौंदे जैसा पड़ा रहा
सड़क पर कंकड़ की तरह
छवि बिगाड़ता रहा
कैसे कहें उसे कवि

कुछ नहीं करना
करना क्यों हुआ
फिर जो कर रहे हैं
खेत में खप रहे हैं
सड़क पर गोली खा रहे हैं
हवा में गीत बाँध रहे हैं
पत्थर काटकर
कविता कर रहे हैं
उन्हें क्या कहूँ।

(7-11-81)

ऋग्वेद पढ़ते हुए

मैं आदमी की जड़ों में
पहुँच गया
पीछे लौट गया
बचपन के बचपन में ।

हत्या

पेड़ को पेड़ काट रहा है
गोश्त का पेड़ एक
वनस्पति का दूसरा
ठेकेदार ने हाथ पैर काट दिये
उराँव और संथाल भाइयों के
कटा हुआ आदमी
पेड़ काट रहा है
एक अधूरा
रहने नहीं देगा दूसरे को पूरा।

अरहर की दाल

कितनी स्वादिष्ट है
चावल के साथ खाओ
बासमती हो तो क्या कहना
भर कटोरी
थाली में उड़ेलो
थोड़ा गर्म घी छोड़ो
भुनी हुई प्याज
लहसन का तड़का
इस दाल चावल के सामने
क्या है पंचतारा व्यंजन
उंगली चाटो
चाकू चम्मच वाले
क्या समझें इसका स्वाद !

मैं गंगा में लहर पर लहर
खाता डूबता
झपक और लोरियाँ
हल्की हल्की
एक के बाद एक थाप
नींद जैसे

नरम जल
वाह् रे भोजन के आनद
अरहर की दाल
और बासमती
उस पर तैरता थोड़ा सा घी।

(18-1-82)

उषा
(ऋग्वेद की प्रेरणा से)

माँ की तरह जगाती बच्चों को
स्कूल जाना है
पत्नी की तरह जगाती पुरुषों को
उठो काम पर जाओ।

हल्की लाली है नारंगी चाँद जैसे
जलाती रवि की तरह नहीं आती तू
तालाब में पत्थर मारा किसी ने
ऐसे कल कल करते
उड़ते फिरते पंछी सारे
हलकी है तू बाल रवि सी
यौवन सी उद्दाम नहीं

पहले तू ही आयेगी
तभी मैं आउँगा
तू न होती तो मैं कैसे होता

धीरे धीरे उतर रही है नीचे
नारंगी पल्ला लहराती
मुस्कान बिखराती आकाशों में

तेरी गोदी में छोटा सा सूरज
जगत प्रकाशक
धरती का त्राता
तेरी गोद में मैं हूँ
तेरी गोदी में कवि
तू माँ है कवि को

अब न तू नदी की तरह खाँसेगी
अब न तू बंद करे कुण्डी,
खिड़की, दरवाजे
अब न तू सूरज से डर कर भागे
घुलमिल जायेगी रवि में
तू छोड़ेगी नारंगी चोला
लाल दोपहर हो जायेगी
तेरा ही चरमोत्कर्ष सूरज है
तेरा ही यौवन
उद्दाम चोटी का रूप बना वह
जब तुम दोनों एक हुए तो
सूरज हुआ

माँ बेटे कब एक हुए
जो तेरा प्रेमी था पति था
वही पुत्र बन कर गोदी में आया
उषा तू ने प्रेम किया
तूने ममत्व लुटाया

पा नहीं सका तुझे वह
जलता रहा दिन भर

फिर अगले दिन गोदी में तेरी आया
तेरे हाड़ माँस से निकला
तुझ से फूटा अंकुर लाल
तू अंडा भर है
जो फूट गया है।

(21-1-82)

उदासीन

कितनी उदासीन हैं लड़कियाँ,
कवि कविताएँ लिख रहे हैं उन पर,
उन्हें फर्क नहीं पड़ता।
वे कविताएँ नहीं पढ़तीं।
कवि चूम रहे हैं उन्हें
उन्हें कुछ नहीं होता।
आगे नहीं बढ़तीं,
ज्यों की त्यों रहती हैं,
कवि उन पर मर रहे हैं
जिन्दा रहती हैं वे।

कितनी सहज लापरवाह हैं वे
कवि उनके लिए तरस रहे हैं
वे सो रही हैं,
खाना पका रही हैं,
बुनाई कर रही हैं,
रेडियो सुन रही हैं।

सजधज रही हैं लड़कियाँ
कवि उदास हैं उनके लिए,
खुश हैं लड़कियाँ।

(4-3-82)

मुझसे ही

मुझ से ही होंगी पूरी तुम्हारी इच्छाएँ
मैं ही हूँ तुम्हारा निदान
हल हूँ सवालों का
समस्याओं का समाधान
मुझसे ही पूरी होंगी
तुम्हारी कमियाँ
मुझसे ही भरेगा खालीपन
तुम्हारे अभाव में
वसंत की तरह आऊँगा
हवा की तरह तुम्हारे
सूनेपन में
समय की तरह भरूँगा
तुम्हारा एकांत
घटना की तरह,
तुम्हारे जीवन में जरूरी हो जाऊँगा।
मुझसे ही कुछ हो सकेगा तुम्हारा
मुझसे ही पूर्ण होगी तुम
मैं ही भरूँगा तुम्हारा अधूरापन,
तुम्हारी चिंताएँ, सोच और आकांक्षाएँ
मैं ही करूँगा हरूँगा मैं ही।

(15-4-82)

मैं क्या हूँ

मैं क्या हूँ
दो फेफड़े
धड़कता मांस पिंड
खून से लथपथ नसें
नाड़ियाँ
छोटी आँत
बड़ी आँत
रोटी दाल से भरी
सिकुड़ती फैलती चाय से
भरी भरी
अब फटी कि तब फटी
गुर्दा जिगर
और धक-धक
हवा का फेफड़ों में
आना-जाना
चिड़िया की तरह रहना
फेफड़े के घोंसले में
नाक की राह उड़ जाना

बिस्तर पर नहीं मरूँगा मैं

पता नहीं कहाँ
अनजान राह पर
कुसमय
निकले दम।

(24-5-82)

गदाखोर

गदाखोर की खान में
दस फुट नीचे
उतरा नेपाली मजदूर राम बहादुर
पलीता लगाया बारूद में
धड़-धड़ तड़-तड़ाक
फटा पहाड़
बच कर कहाँ भागता जवान
राम बहादुर
धायँ धायँ धमाका
बारूद और पत्थर के नीचे
गिरा दबा आदमी।

नेता ने कहा—
"मालिक चन्दा देते हैं हमें
कैसे दिलायें मुआवजा"
मालिक का कहना है—
"अगर मुआवजा दूंगा तो घाटा होगा
मुझे क्या मिलेगा फिर
मरते हैं तो मरें

फिर जनसंख्या भी तो
घटती है इस तरह
बारूद से मरा
मैंने तो नहीं मारा
मैंने पूरी मजदूरी दी
4 रु० रोज
इसके बाद मरे या जिए
मैं क्या करूँ ?"

श्रम शक्ति भवन पर
खड़े हैं 45 श्रमिक
किनारे रखी है लाश
4 घंटे हो गये
आ गये श्रम मंत्री
भगवत झा आजाद
स्वामीजी ने आगे बढ़ कर कहा—
"मंत्री जी !
यह जवान लड़का
खान तोड़ते मरा
इसका परिवार क्या करे ?
कितनी कम उम्र
अभी पूरा आदमी भी नहीं हुआ
यह हत्या है महोदय·
मुआवजा दिलायें परिवार को"

केवल एक सैकिंड रुका
चलते-चलते
मंत्री ने मुँह फेर लिया—
"इसका क्या प्रमाण है कि

यह उसी की लाश है
क्या प्रमाण है कि यह
खान में मरा
लाश आप कहीं से भी
उठा लाये हों।"

मुड़ा श्रम मंत्री
और चला गया ऊपर

(29-6-82)

युद्ध से लौटा सैनिक

(दिल्ली से गाजियाबाद जाती बस में एक यात्री अपनी पत्नी से कह रहा था। सैनिक के हाथ और पैर कट चुके हैं।)

मेरा हाथ चला जाता है
कटी बाँह पर
खुजली होती है कलाई में
बार-बार घुटने के नीचे
मच्छर काटता है
हाथ उधर जाता है नींद में
चादर से टटोल कर लौट आती है
मेरी वह बाँह जो नहीं रही
दुख रही होगी सिर के बोझ से
कैसे बदलूँ उसे
कैसे लूँ करवट

(15-9-82)

जीतना

"पापा जीतना क्या होता है ?"
पूछती है 5 साल की जूली
क्या वताऊँ
वेटा ! जो हार जाता है
"क्या मतलव ?"
यानी जो गिर पड़ा
वह हार गया
और जो नहीं गिरा
जो नहीं भागा वह जीता
"क्या मतलब ?"
कैसे वताऊँ इसे
जीतना वेटा
क्या होती है जीत !

(15-9-82)

जवान

मैं तब जवान था जवान
फीरोजशाह कोटला
दीन पनाह
पिथौरागढ़
सूरज कुंड
तुगलकाबाद में घूमता
जवान था जब मैं जवान
इतिहास में खोया रहा
अतीत में डूबा रहा
हँसती उषा
गाते पहाड़ को नहीं देखा
आँख बंद किये।
अँधेरे में पड़ा रहा

अब समय जवाब दे चुका है
कैसे देखूं सुबह
कैसे चाँदनी
कैसे करूं प्यार
कैसे निवेदन-आवेदन
मैं कैसे जिऊं कैसे ?

मैं जब जवान था जवान
जीवन का अनुवाद करता रहा
नौकरी में उलझता रहा
आजाद था
बंधक बनता रहा
अब वही में दबा
ऋणों में जकड़ा
मुक्ति को तरसता

मैं जब जवान था जवान
तब जवान था जवान
जवानों जैसा कड़ा
देह पाथर
इरादे इस्पात
मन फूल-सा
तन हवा
मैं जब जवान था जवान
तब जवान था मैं।

(15-9-82)

समय

यह कैसे होता है
दिन हो जाता है रात,
रात हो जाती है दिन।
दिन रात टिकते नहीं,
झिलमिल करते
बार बार चक्कर काटते
बदल जाते हैं पारे से
साल पर साल।
लो 10 बरस,
20 बरस,
30 बरस,
40 बरस बीत गए।
इतनी जल्दी
भागते-भागते कैसे बीत गए इतने साल।
मैं ठहरा नहीं,
टिका नहीं कहीं,
समय मैं तुझे समझ नहीं सका।
हवा की तरह रहा मैं,
कि तू हो गया।
चेता रहे हैं सब

समय हो गया
समय हो गया।
भाई !
मैं तो शुरू भी न कर पाया था
कि लो पूरा हो गया।
समय है कि आफत !
विना चखे
भर देता है पेट,
विना खिले झर जाता,
बिना हँसे
डालता झुर्रियों का जाल।
कैसा मूर्ख रहा मैं
तुझे समझूँ
पकड़ कि देखूँ
कि तू हाथ से निकल गया।
समय तू असमय ही,
आगे निकल गया।
समय हुए बिना
मेरा समय हो गया।
आधी छुट्टी का वक्त था
कि पूरी छुट्टी हो गयी।
कैसे चलेगी पाठशाला,
मास्टरों की लापरवाही,
कैसे पूरे होंगे पाठ
परीक्षा में क्या होगा !

(20-9-82)

लदर पदर

लदर पदर
भदर भदर
54 लाख लोग चढ़े बसों में
चढ़े बसों में लोग
लदर पदर लटके स्कूटर
लदे साइकिलों पर
चले लोग सटर-पटर दफ्तरों,
कारखानों, धंधों की ओर

लदर पदर
लाख लाख लोग
रोटी का डिब्बा लिये
जेब में बीड़ी
डाक्टर का नुस्खा
मकान का नक्शा
रेजगारी हिलाते
27 लाख लोग घुसे
दफ्तरों, कारखानों में

भद भद
भदर भदर करते
लोग बैठ गए
कुर्सी और बेंचों पर
फाइलों में डूब गए
मशीन में खो गए
कट गए करोड़ करोड़
बच्चे
हँसियाँ किलकारियाँ
लड़कपन
जवानियाँ
जीवन की निशानियाँ।

करोड़ करोड़ लोग
शाम को उड़े चमगादड़ों की तरह
लटके बसों
लोकल रेल और साइकिलों पर
कटे पिटे
हारे थके
घरों को।

(6-11-82)

गाँव

इस गाँव में लंगड़े हैं हरिजन
लड़खड़ा रहा है पूरा गाँव
पेट के बल रेंग कर चलते हैं
खेत
खड़ा नहीं होने देती मेरे देश को
मटरा की दाल
इस लंगड़े गाँव
इस लंगड़ी रात में
वियावान
मुझे तेरी याद आती है गुड्डी
चाँद की लंगड़ी किरन
उतर नहीं पाती नीचे
याद आ गया फिर
साँवले गाल पर गड्ढा
तेरे साथ बीते वे क्षण
लड़खड़ाते हैं मन में
सीधे खड़े नहीं हो पाते वे चित्र।

तू वहाँ पिस रही होगी,
या खिल रही होगी !

पता नहीं क्या कर रही होगी,
उस अनजान शहर में !

तू मेरी नहीं हो सकी
फिर क्यों याद आती है
लड़खड़ाती हैं यादें तेरी
चेहरे को ढक लेती थीं
अलकें
काँपते वे होंठ
हड़बड़ी और जल्दी में
भागती हुई-सी तू
क्यों जागती रहती है मन में।

(24-12-82)

पड़ताल

सर्वहारा को ढूँढने गया मैं
लक्ष्मी नगर और शकरपुर
नहीं मिला तो भीलों को ढूंढा किया
कोटड़ा में
गुजरात और राजस्थान के सीमांत पर
पठार में भटका
साबरमती की तलहटी
पत्थरों में अटका
लौट कर दिल्ली आया।

नक्सलवादियों की खोज में
भोजपुर गया
इटाढ़ी से धर्मपुरा खोजता फिरा
कहाँ कहाँ गिरा हरिजन का खून
धब्बे पोंछता रहा
झोंपड़ी पे तनी बन्दूक
महंत की सुरक्षा देखकर
लौट रहा मैं
दिल्ली को।

बंधकों की तलाश ले गई पूर्णियाँ
धमदहा, रूपसपुर
सुधांशु के गाँव
संथालों गौंडों के बीच
भूख देखता रहा
भूख सोचता रहा
भूख खाता रहा
दिल्ली आके रुका।

रीवाँ के चन्दन वन में
जहर खाते हरिजन आदिवासी देखे
पनासी, झोटिया, मनिका में
लंगड़े सूरज देखे
लंगड़ा हल
लंगड़े बैल
लंगड़ गोहू, लंगड़ चाउर उगाया
लाठियों की बौछार से बच कर
दिल्ली आया।

थमी नही आग
बुझा नहीं उत्साह
उमड़ा प्यार फिर-फिर
बिलासपुर
राय गढ़
जशपुर
पहाड़ में सोने की नदी में
लुटते कोरवा देखे
छिनते खेत
खिंचती लंगोटी देखी

अंबिकापुर से जो लगाई छलाँग
तो गिरा दिल्ली में ।

फिर कुलबुलाया
प्यार का कीड़ा
ईंट के भट्टों में दबे
हाथों को उठाया
आजाद किया
आधी रात पटका
बस अड्डे पर ठंड में
'चौपाल' में सुना दर्द
और सिसकी
कोटला मैदान से बोट क्लब तक
नारे लगाता चला गया
'50 लाख बंधुआ के रहते
भारत माँ आजाद कैसे'
हारा थका लौट कर
घर को आया ।

रवांई गया पहाड़ पर चढ़ा
कच्ची पी बड़कोट पुरोला छाना
पाँडवों से मिला
बहनों की खरीद देखी
हर बार दौड़ कर
दिल्ली आया ।

(29-12-82)

पहाड़

(उदेयपुर से डूंगरपुर जाते हुए)

पहाड़ तुम कहाँ रहे !
इतने दिन ?
बहुत दिन बाद मिले,
कहाँ रहे भाई।

(डूंगरपुर, 28-1-83)

यात्रा
(वेणेश्वर मेले से डूंगरपुर लौटते हुए)

पहाड़ी पर जीप में जा रहे हो तुम
धड़ाधड़
सड़क सुनसान वियाबान
मीलों तक कोई नहीं
मेले से लौटता कोई परिवार
थका पैदल चला जाता है
नंगे पाँव
पसीने से सराबोर
जीप की आवाज से
मुड़ कर देखता है वृद्ध
पर रुकती नहीं जीप
दौड़ती चली जाती है
मुड़ कर देखती है
गुजरती जीप को युवती
क्या है उस आँख में
मुड़ कर देखती है बच्ची
क्या है इस आँख में
जैसे हिरन देखे भेड़िया
आगे निकल गई जीप
कीचड़ उलाँघी हो जैसे।

(डूंगरपुर 30-1-83)

आठ साल का वह

आठ साल का हो गया
पान सिंग
माँ देस भेज रही है उसे
नीचे मुरादाबाद से उतरते ही
पैसे ही पैसे हैं
वहाँ से भेजेगा यह

पान सिंग
चचेरे भाई के साथ जाना
वो है 19 का

आठ साल का है अभी बस
साफ बोल नहीं पाता
जायेगा दिल्ली
पता नहीं कहाँ रहेगा ?
वहाँ क्या करेगा ?
क्या खायेगा ?
बस मनी आर्डर करेगा जाते ही

घर चलायेगा वहाँ से
चलायेगा पूरा पहाड़
दुनिया उठायेगा
पीठ पर
आठ साल का पान सिंग।

(16-2-83)

होली पर आना
(विवाह के बाद ससुराल से पहला पत्र)

आपका पत्र नहीं आया
भइया और मुन्नी कैसे हैं !
उनकी पढ़ाई कैसी चल रही है !
पहले उनके हर सप्ताह पत्र आते थे
अब वे भी बंद हो गए।

यहाँ बहुत ठंड पड़ रही है
आपकी बहुत याद आती है
पता नहीं मिल पाऊँगी कब ?
आप गाँव आइये
मैं होली पर आऊँगी।

मैं रोज इंतजार करती हूँ
पर आपका पत्र नहीं मिला
कल यानी 2 फरवरी को
बहुत याद आई
पिछले साल उस दिन मैं वहीं थी
आपने हमेशा

मेरी सालगिरह मनाई
पर इस बार !
इस बार तो कोई
सवाल ही नहीं था ।

(16-2-83)

उस घर में-1

(1)

मस्जिद में अजान हो रही होगी
हम ऊनी कपड़ों में लदे फदे
चिक की आड़ से,
फौज की कवायद नहीं देख रहे होंगे।
नाले के ऊपर पत्थर पर
हम मूँगफली
नहीं खा रहे होंगे।

जन्माष्टमी सजी होगी
हम छत पर बने मोखले से
नल की ओर नहीं झाँक रहे होंगे।

खाना खाने के बाद
हम पिता के साथ
ठंडी सड़क पर
औघड़नाथ जा रहे होंगे
चाँद मेरे साथ चल रहा होगा,
सड़क मुड़ने पर मुड़ रहा होगा।
मकानों के बीच

वाग की कटीली वाड़ में
मेरा पीछा कर रहा होगा।
उसे हाथ कुछ नहीं
लग रहा होगा।

सामने की दूकान पर काले चाचा
वर्फी लिये
मेरा इन्तजार कर रहे होंगे।
पाकिस्तान वनने से पहले।

चुन्ना का दूध औट रहा होगा
देर रात खाली कढ़ाई में
पलटा खटकाने की आवाज
आ रही होगी।

(2)

खाने की मेज पर मैं
उसके दरवाजे को कनखियों से
नहीं वचा रहा होऊंगा
कोठे की खिड़की वन्द करके
सन से
दोपहर एक वजे
कालेज से लौटती गीता को
मैं नहीं पी रहा होऊँगा।

सड़क के नल पर
बच्चे नंगे नहा रहे होंगे,
दौलत की चाट वाला
गुजर गया होगा।

सब माँएँ अँधेरे कमरे में
चटाई पर सो रही होंगी।
छत पर तपती सीढ़ियों पर
मैं और रमेश
चढ़-उतर रहे होंगे
हरा खेल खेल रहे होंगे
पसीने से सराबोर
भरी दोपहरी में हम
इंद्र धनुष हो रहे होंगे।

हम रजमन जा रहे होंगे,
कोलतार की खौलती सड़क पर।
जापानी रंगीन छाते में माँ के साथ
हम दोनों
महताब टाकीज नहीं जा रहे होंगे
'महल' देखने पाँचवी बार
अंगीठियाँ धुआँ जन रही होंगी
शहर में शाम हो रही होगी।
मैं वहाँ नहीं हो रहा होऊँगा।

रात में हम
काली बाड़ी से लौट रहे होंगे
बम्बई बाजार घूमने के बाद
फालूदा खा रहे होंगे।

आँधी में नीम सन सन
कर रहा होगा
काली छत पर गद्दा बिछाये
मैं करवट नहीं बदल रहा होऊँगा
हरी यादों के लिए रात भर।

उस घर में-2

पता नहीं मेरा जिक्र हो रहा होगा
या नहीं
उस घर में छत के ऊपर
उस बरामदे में जहाँ
सर्द सुबहों में
नमकीन पराँठा डालकर
तश्तरी में
तइया के हाथ की चाय पी हमने
ताऊ के साथ।
उसी बरामदे में
मुझे गाली दे रही होगी बहन
भाई मुँह बिगाड़ रहा होगा
माँ पाँव के अँगूठे का नाखून
खुरच रही होंगी,
वे कुछ नहीं कह रही होंगी।

मुझे कोई याद नहीं
कर रहा होगा
गाली भी नहीं दे रहा होगा
पिता ढीली पतलून

खिसकाते जीना उतर रहे होंगे
उन्हें देर हो रही होगी
30 साल का बच्चा
अखबार में 'वान्टेड' ढूँढते ढूँढते
अनवाँटेड हो गया होगा।
कुछ करने को नहीं रहा होगा।
उस घर में 13 साल बाद
कितना गैर जरूरी हो गया होऊँगा मैं।

जिस घर की सीढ़ियों पर
तइया बैठकर गप्प मारती थीं
माँ दाल बीनती थीं
उस घर की सीढ़ियों से
हम कूदते थे
सपनों की तरह
भविष्य में।
मैं वहाँ बेवजह
झाड़ू की सींक-सा पड़ा होऊँगा।
सूखी पत्ती की तरह
कूड़ा हो रहा होऊँगा।
पिता का दोस्त
रेडियो और बेतार के तारों से
सजा सुलझा
नीम का पेड़
क्या कर रहा होगा,
जिसकी कर्कश जाँघों पर
कभी हरी गिलोय लिपटती थी।
नल के पास निबौलियों से भरे
ईंटों के पटाँगण में

कितना परदेसी
कितना अजनबी हो गया होऊँगा मैं ।
33 साल बाद
छुट्टी में आती होगी बहन
उसकी बिना भरी माँग
बिन बिछुए के पाँव
गाली भी क्या देती होगी वह मुझे ।
इस अँधे कुएं
यादों के फाँसी घर में
जाने का साहस नहीं करता होऊँगा मैं
अँधेरी पतली अतीत-सी गली से
भूल कर भी
गुजरता नहीं होऊँगा मैं ।

(23-2-83)

कंडक्टर

जाड़े की है रात
हवा दिसम्बर की
घना कोहरा
सुनसान सड़क
फुटपाथ पर छटपटाती पत्तियां सूखी
चली जा रही है बस जैसे रोती हुई
कंडक्टर बैठा है चुपचाप पीछे
कोई नहीं मुसाफिर

सुनसान घर कंडक्टर का
गंदी बस्ती में
सुनसान है उसका प्रेम
सुनसान उसकी रोटी
सुनसान उसकी पत्नी
सुनसान उसका बच्चा
सुनसान है उसका अतीत

चुपचाप बैठा वह पीछे
जैसे कविता की किताब में
निरीह विराम चिन्ह

पहिये के नीचे आये पिल्ले-सा
पड़ा है वह इस दुनिया के गढ्ढे में
टिकट फाड़ता है जैसे
सीना फाड़ रहा हो
मुर्दनी है
पूरी बस में
कोहरे भरे शीत में
ठिठुरता भी नहीं वह
जाड़े की रात
अकेला बैठा है
जैसे जमा हुआ पानी
कीचड़ पर तैर गया हो

कंडक्टर भाई ! उठो !
अकेले तुम नहीं हो
कम से कम ड्राइवर को तो
अपना समझो
व्यस्त हैं जिसके हाथ
खाली नहीं है जिसका मन
अकेले नहीं रहोगे तुम
इस आँधी पानी में

तुम सारे दिन चलते रहे
पर गये कहीं नहीं
तुम जीवन पर दौड़े
पर रहे वहीं के वहीं
हम क्या करें
कि तुम मुस्कराओ
क्या करें कि तुम्हारी

बच्ची स्कूल जाए
क्या करें ! क्या करें हम !
कि तुम्हारी पत्नी
खीर पकाये
क्या करें हम
कि तुम लड़ो नहीं|घर जाकर
हम क्या करें
कि आफ के दिन
तुम पिक्चर जाओ
परिवार के साथ

(5-3-83)

छुट्टी का कवि

अपने मसरुफ जीवन में
दफ्तर आते जाते
खाना खाते
नहाते शेव बनाते
भाग दौड़ में नहीं पाता समय
अखबार पढ़ते
दोस्तों को निबटाते
हँसते मुस्कराते और
बाजार
आते जाते नहीं पाता वह समय
छुट्टी लेता है साल में एक बार
कवि
साल में एक बार
लिखता है वह कविता
अगले साल फिर लेता है वह छुट्टी
पढ़ता है वह अपनी
पुरानी कविता
तीसरे साल फिर छुट्टी
तब लिखता है उस कविता को
वह खुशखत

चौथे साल पढ़ाता है दोस्तों को
पाँचवे साल भेजता है छपने को
अपने व्यस्त जीवन में
साल में एक बार
लेता है कवि छुट्टी
छुट्टी का कवि है वह
'रविवारीय कलाकार'
नहीं है
वार्षिक होता है
उसका आयोजन
कैसे क्या होगा कविता का
उसके ज़ीवन की
उपलब्धि
महत्वकाँक्षा
ललक
साल भर लटकी रहती है
दफ्तर आने जाने वाली राह में
कैसे करेगा यह कुछ
दफ्तर बहुत नाराज है
छुट्टी क्यों लेता है
बेबात यह*

(15-3-83)

* देखिये, यह कविता भी लिखी उसने छुट्टी लेकर।

थैला

बस में भीड़
पैर पर पैर
मुँह पर मुँह
हाथ पर पेट
पेट पर जाँघ
जांघ पर पीठ
भीड़ में हाय
फंस जाता है बीच में थैला
अड़ जाता है
पीछे रह जाता है भीड़ में थैला
बचाता है उसे
निकाला जाँघों
बाँहो और पैंटों की
लहरों से
थैले में रोटी है।

सड़क पर भागम भाग
इधर से उधर
हाय हाय
लाल हरी बत्तियाँ

सार्वजनिक शौचालय
भागता बचता पिचता
बचाता है वह
थैला !
थैले में रोटी है !

(15-3-83)

पेट

कूद कर भीड़ में
चढ़ जाता था बस में वह
बाँहों और पेटों की सुरंग से
गुजर जाता पानी की तरह
अपने को सिकोड़ता
गत्यात्मक है आदमी
सिकुड़ फैल जाता है शरीर
चाहे जितना झुक मुड़ जाओ
उठ उभर जाता है आदमी
द्वन्द्वात्मक है आदमी।

इधर से उधर निकल जाता था वह
भरे रेले में
नदी जैसी भीड़ में
तैरता था वह अंगों की
ओप में नहाता हुआ

पर आड़ा हो तिरछा हो
फँस जाता है भीड़ में
चढ़ नहीं पाता उतर नहीं पाता वह

दो जनों के बीच में
अड़ जाता है
छोटे और बड़े के
बीच फँस जाता है वह
क्या बात है
क्या हुआ उसे
वह तो वही है।
फिर यह क्या हुआ
बीच में अड़ता है पेट
भीड़ के पेटे में
रह जाता है वह
पेट के कारण

तुम

तुम मिलीं मुझे
जैसे मैकेनिक को
औजार
तुम मिलीं जैसे
बच्चे को खिलौना
तुम मिलीं
जैसे मजदूर को
बीड़ी का बंडल
जैसे रोगी को नींद
कवि को कविता
बछड़े को थन
मिलीं मुझे तुम।

(15-4-83)

मैं कहीं नहीं हूँ

कहीं नहीं होगा मेरा शिलालेख
न साँची में न सारनाथ में
कहीं नहीं होगी मेरी समाधि
न सिकन्दरा में न सासाराम में
कहीं नही, कहीं नहीं रहूँगा मैं
नहीं होने के बाद
कहीं नहीं होगा कोई मकबरा
चैत्य या स्तूप
न सहेत महेत में
न राजगीर में

सुबह सुबह चहकने वाली
फाख्ता की तरह नहीं रहेगी मेरी आवाज
दोपहर को तीतर की तरह
नहीं गूंजेगी मेरी बात
पहाड़ियों में
सीढ़ीदार धान के खेत
और खड्ढ में
धौलाधार के सफेद धार में
कहीं नहीं कहीं नहीं

होगी मेरी कोई गूँज
पहाड़ी पर खलिहान में अकेले खड़े
विशाल चीड़ की तरह
गिरा दूँगा मैं अपनी सुइयां
कोई नही देखेगा वहां
मेरी हरी छाँह
कोई नहीं सुनेगा वहाँ
मेरी ठंडी हवा
चारों तरफ की पहाड़ियाँ
बीच में खड़ा अकेला पेड़

किसी किताब में
किसी कविता में
जिक्र नहीं होगा
कोई फिल्म नहीं बनायेगा
मेरे सौन्दर्य की
कालू द वड़
और रमजान बड़
जाने वाली पगडंडियाँ
ऐसी ही पड़ी रहेंगी घास पर
पेट उघारे
ऐसे ही लेटी रहेंगी
मैली चादर की तरह
मैं उन पर चल नहीं रहा होऊंगा
वह दिन मैं भोग रहा हूँ
जब मैं कहीं नहीं हूँ
वादलों में
धारों में

खड्ड
और टीवों में
खेतों और
पगडंडियों में
पक्षियों की चह्‌चह में
मैं कहीं नहीं हूँ
वह दिन मैं देख रहा हूँ ।

(15-7-83)

प्रतीक्षा

मैं कब से पड़ा हूँ
इस कोने में
कि कोई आयेगा
झाड़ पोंछ कर उठायेगा
और सम्भाल कर रख देगा
सुनहरे जड़े स्वप्न में

मैं कब से पड़ा हूँ
गली के मोड़ पर
कि वह कोई आयेगी
फूलों से नहलायेगी मुझे
फूलों से सजा कर
फूल की तरह
लिपट जाएगी

मैं कब से पड़ा हूँ
वहीं का वहीं
वह कोई आयेगा
भूखे को रोटी देगा
अँधे को आँख

लँगड़े को पाँव देगा
कमजोर को लाठी
कब से कब से
क्रान्ति की राह में
खड़ा है पूरा देश।

(19-7-83)

मेरी बेटी

मेरी बेटी बनती है
मैडम
बच्चों को डाँटती जो दीवार है
फुटे बरसाती मेज कुर्सी पलंग पर
नाक पर रखा चश्मा सरकाती
(जो वहाँ नहीं है)
मोहन
कुमार
शैलेश
सुप्रिया
कनक
को डाँटती
'खामोश रहो'
चीखती,
डपटती
कमरे में चक्कर लगाती है
हाथ पीछे बाँधे
अकड़ कर
फ्राक के कोने को
साड़ी की तरह सम्हालती

कापियाँ जाँचती
'वेरी पुअर'
'गुड'
कभी 'वर्क हार्ड'
के फूल बरसाती
टेढ़े-मेड़े साइन बनाती

वह तरसती है
माँ पिता और मास्टरनी बनने को
और मैं बच्चा बनना चाहता हूँ
बेटी की गोद में गुड्डे सा
जहाँ कोई मास्टर न हो !

(21-8-83)

दहलीज

वे अन्दर चले गये सब
बाद में जो आये थे
मैं दरवाजे पर पड़ा हूँ
वे अन्दर समा गये सब
जो कल ही जन्मे थे
वे हुए पैगम्बर
महाकवि
महान पत्रकार
नेता और महामानव
मैं अपने को नहीं बदल रहा हूँ
दरवाजे पर खड़ा हूँ
एक महा विलाप के सिवाय
विलम्बित चीख के अतिरिक्त
कुछ नहीं हूँ मैं
किसी के साथ नहीं हूँ मैं

अन्दर हो रही है आरती
बज रहे हैं घड़ियाल
शंख फुक रहे हैं
बट रहा है प्रसाद, चरनामृत

मेरे लिए नहीं हैं ये पवित्र कर्म
आत्म निर्वासित है मेरा राग
दायरे से बाहर है मेरा दाव
मुझ से पार नहीं हुई दहलीज
पाँवों में नहीं था खून
उँगलियों में नहीं चाल
नसों में नहीं थी आग
दहलीज सिर्फ देहली
पार नहीं हुई मुझसे
गाँव में होता तो
झोंपड़े के साथ जला देते सवर्ण
यहाँ बाहर बना रहा।
सदियों तक खड़ा रहा।

(10-9-83)

इच्छा

मैं मरूँ दिल्ली की चलती हुई बस में
पायदान पर लटक कर नहीं
पहिये से कुचलकर नहीं
पीछे घसिटता हुआ नहीं
दुर्घटना में नहीं
मैं मरूँ बस में खड़ा-खड़ा
भीड़ में पिचक कर
चार पाँव ऊपर हों
दस हाथ नीचे
दिल्ली की चलती हुई बस में मरूँ मैं

अगर कभी मरूँ तो
बस के बहुवचन के बीच
बस के यौवन और सौन्दर्य के बीच
कुचलकर मरूँ मैं
अगर मैं मरूँ कभी तो वहीं
जहाँ जिया गुमनाम लाश की तरह
गिरूँ मैं भीड़ में
साधारण कर देना मुझे हे जीवन !

(20-9-83)

परामर्शदाता

वे आ गए परामर्शदाता
उच्चस्थ सलाहकार
चुने हुए
चुने हुओं में सर्वश्रेष्ठ
इन्होंने जिनको सिफारिश की
वे हो गए
सहायक
विशेष
उपस्थ
और
कार्यकारी
फिर ये लौट गए वापस
अपनी कुर्सी पर
जहाँ के तहाँ
गोबर के चौथ
बरगद के इनकी इच्छा से
हिलते हैं पत्ते
इनकी इच्छा से हिलती है हवा
ये खुद नहीं हिलते
खुश हैं इनके लिए चल रही है हवा

हरी छाँह हो रही है
पत्ते बज रहे हैं
कुछ नहीं करते
कराते रहते हैं
न ऊपर होते हैं न नीचे
पूरी दुनिया हिलाकर
आग लगवाते
ठण्डा करवाते हैं ये
खुद समशीतोष्ण हैं
निर्गुट
तटस्थ
निर्द्वन्द
निराकार
सिर्फ सलाहकार हैं
कान में फुसफुसाते
होंठ हैं बस।

(30-9-83)

सलाह

शेर को सलाह दी
खरगोश ने
शेर हिरन को खा गया
भेड़ियों को भगा दिया
खा गया नील गाय को

शेर को सलाह दी खरगोश ने
वह हाथी को मार आया
सुनसान हो गया सारा जंगल
कुछ नहीं बचा खाने को
भाँय-भाँय कर रहा था
शेर के पेट का कुआँ
उसने पुकारा खरगोश को
वह अपने सदाबहार बिल से
बाहर आया
शेर उसे चट कर गया।

कवि की मृत्यु पर
(सर्वेश्वर जी के लिये)

ऐसे ही छपते रहे अखबार
बच्चे खेलते रहे
शोक सभा होती रही
तुम नहीं थे वहाँ
नाटक देखती रहीं लड़कियाँ
कविता पढ़ते रहे प्रेमी
बसें भरी थीं
सड़कें लबालब थीं शोर से
कला प्रदर्शनी खाली थी
चौराहे पर रुकी थीं गाड़ियाँ
कहीं कुछ नहीं रुका
आलोचक करते रहे विवाद
नृत्योत्सव में खाली थी
आगे की एक सीट
वही थी गति
ताल लय
जीवन को
स्वप्न सुन्दरी
नाच रही थी और भी अच्छा।

(30-9-83)

सड़क पार करने वालों का गीत

महामान्य महाराजाधिराजों के
निकल जायें वाहन
आयातित राजहंस
कैडलक, शाफर, टोयेटा
बसें और बसें
टैक्सियाँ और स्कूटर
महकते दुपट्टे
टाइयाँ और सूट

निकल जायें ये प्रतियोगी
तब हम पार करें सड़क

मन्त्रियों, तस्करों
डाकुओं और अफसरों
की निकल जायँ सवारियाँ
इनके गरुड़
इनके नन्दी
इनके मयूर
इनके सिंह
गुजर जायें तो सड़क पार करें

यह महानगर है विकास का
झकाझक नर्क
यह पूरा हो जाय तो हम
सड़क पार करें
ये बढ़ लें तो हम बढ़ें
ये रेला आदिम प्रवाह
ये दौड़ते शिकारी थमें
तो हम गुजरें।

(24-10-83)

पनासी के आदिवासियों का गीत

कोठरी भरी हो नमक से
महुए के तेल से भरा हो आँगन
बोरियों में हो गेहूँ और चावल
मटरा न हो दूर-दूर तक

दोनों पैरों पर खड़े हों
अपने पैरों पर हम
बिना लकड़ी के
वर्षा में नाचे हम

सोमवार, मंगल और बुध को नहीं
गुरु, शुक्र और शनि को भी खायें रोटी हम
पेट भरा हो रवि को
टुइला बजायें
बाँसुरी बजे
टमस के किनारे
तलहट्टी की चट्टान पर
झूमें हम
ढोलक ही न बजायें
फाग गायें हम

बच्चे पढ़ें शाला में
पानी पियें
लाल साहब के कुएँ पर
फोड़ें गुड़ की भेली
सपने में नहीं देखें रोटी हम

(10-11-83)

आदिवासी का सपना

नमक से भरी कोठरी देखी
बोरी में बन्द
सफेद सागर
लवण के झाग
मैंने देखा झोंपड़ी में लहराता
सूखा सागर
डोंगी खे रहे
तैर रहे हैं हम।

दिकू मछलियों को
काँटे में टाँग रहे हैं
मैंने देखा घाटी का पहाड़
घाटी की चोटियाँ
फिसल रही हैं बर्फ सी
घाटी की धार
नीचे लहराता सफेद सागर
बोरों में बन्द सागर देखा मैंने
कोठरी में।

हमने खाईं मछलियाँ
तड़प रही हैं
छटपटाती पेट में
महाजन
ठेकेदार की पसलियाँ।

(12-11-83)

चुपचाप

ऐसे ही चला जाऊँगा
मैं चुपचाप
किसी को पता नहीं चलेगा
इधर-उधर देखेंगे दोस्त
साथी और घर वाले
मैं कहीं नहीं होऊँगा
दोस्त लौटकर आयेंगे
बस स्टैण्ड तक
वहाँ नहीं होऊँगा मैं

थैला नहीं होगा मेज पर
कोट नहीं होगा कुर्सी पर
मेरा कोई निशान नहीं
होगा दुनिया में

दोस्त ढूँढेंगे मुझे
ढूँढेंगे घर वाले
प्रेमी और भाई
मैं चुपचाप चला जाऊँगा।
ऐसे ही बिना बताये

न चीखूँगा, न रोऊँगा
न हँसूँगा, न कुछ कहूँगा
मैं ऐसे ही गायब हो जाऊँगा
देखते-देखते।

तुम पीछे मुड़ोगे
मैं नहीं होऊँगा
तुम कौर तोड़ोगे
मैं नहीं होऊँगा
तुम चाय का प्याला रखोगे
मैं नहीं होऊँगा
तुम्हारा दोस्त
तुम्हारा साथी
किसी का पिता
किसी का दामाद
चुपचाप
गायब हो जाऊंगा मैं।
जैसे रुक जाती है हवा
जैसे उड़ जाती है टिटहरी
मेरी किताबें वहाँ नहीं होंगी
मेरी सिगरेट नहीं होगी
मेरी हँसी
मेरी लिखावट
मेरी बात
मेरा भोलापन
मेरी मक्कारी
यहाँ नहीं बचेगी
पर तुम्हारे मन में रहूँगा मैं
किसी के भी दिमाग से तो
नहीं जाऊंगा मैं।

(12-11-83)

संसार

मुझे नहीं चाहिए
तुम्हारा ये संसार
तुम पर रोता
अपने पर हँसता
ऐसे ही चला जाऊँगा मैं
तुम तरसोगे मुझे देखने को
मेरे मित्रो
और शत्रुओ
किसी के लिये लौटकर नहीं आऊँगा मैं
अपने खंजर फेंक दो
फिर पछताने से भी
हाथ नहीं आऊँगा
मेरा नहीं है ये संसार
चला जाऊँगा
अपने मित्रों के साथ अपनी दुनिया में
जहाँ लोग कविता जीते हैं
जहाँ खेत लंगड़े नहीं होते
जहाँ बच्चे भूखे नहीं सोते
तुम औरों पर हँस रहे होगे
अपने में मस्त

नशेड़ी की तरह
गाता चला जाऊँगा
अपने संसार में चला जाऊँगा मैं
सपनों में खो जाऊँगा
मुझे रत्ती-भर चिन्ता नहीं है
तुम्हारी इस सड़ी हुई दुनिया की

(21-12-83)

वह

साकी नहीं बेयरा है वह
शाम से आधी रात तक
ढालता है वह
फिर भी कितना
निष्प्रभ, निस्तेज
उत्तेजना नहीं होती उसे
गिलास पर गिलास
जाम पर जाम
लाता है वह
हँसता नहीं
आवेग में आवेश में नहीं आता वह।
मुझे होता है नशा,
कुछ नहीं होता उसे।
गाँव की झोंपड़ी में
फटे निकर में बेटा
याद है उसे।

(30-12-83)